हमारी राष्ट्रीय कसौटी

रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

हरिजनसेवक

दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १९ सम्पादक : मगनभाई प्रभुदास देसाई अंक ३५

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–१४

अहमदाबाद, शनिवार, ता० २९ अक्तूबर, १९५५

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

गांधीजी और संरक्षकताका सिद्धान्त

यह अेक बड़ी विचित्र परिस्थिति है कि ज्यों-ज्यों विज्ञानकी अभिवृद्धि हो रही है, त्यों-त्यों समाजके विभिन्न वर्गोंमें भेद और विषमतायें बढ़ती जाती हैं। यद्यपि विज्ञानके क्षेत्रमें हो रही प्रत्येक खोज मनुष्य-जीवनकी किसी आवश्यकताकी पूर्ति कर रही है और अुसकी सुविधा बढ़ा रही है, लेकिन अुसका नतीजा यह होता है कि अमीरों और गरीबोंके बीचकी खाअी और चौड़ी होती जाती है। श्रमको बचानेवाली युक्तियां श्रमको जरूर बचाती हैं, लेकिन वे श्रमिकोंकी भयानक तबाही भी कर रही हैं। समाजशास्त्रियों और तत्त्वज्ञानियोंने अिस विचित्र घटनाका गहराअीसे अध्ययन करनेकी कोशिश की है। परिणामस्वरूप जनतंत्र, जनतांत्रिक समाजवाद, फासिज्म और साम्यवाद आदि नाना प्रकारके वाद पैदा हुअे हैं। लेकिन भेद और विषमतायें कायम हैं। वे स्वतंत्र अर्थरचनावाले अमेरिकामें जितनी हैं अुतनी ही रूसमें भी हैं, जहां कि नियंत्रित सर्वसत्तावादी अर्थरचना है। सामान्य मनुष्यकी मुक्ति अभी भी दूरका सपना ही बनी हुअी है।

सामाजिक बुराअियोंका अन्त करनेमें पूंजीवादकी असफलता तो स्पष्ट है और वह स्वाभाविक भी है। लेकिन दलितोंके लिअे जिनका प्रेम कहानीरूप माना जाता है, अुनकी यानी समाजवाद और साम्यवादकी असफलता समझमें नहीं आती। और अिस बातको देखते हुअे हम अिस निश्चय पर पहुंचे बिना नहीं रहते कि साम्यवाद पूंजीवादसे पैदा हुअी अुसकी अेक प्रतिक्रिया है, लेकिन अुन दोनोंमें अेक बुनियादी समानता है — वे मानते हैं कि मनुष्यका स्वभाव मूलतः स्वार्थपरायण है। दोनोंके लिअे मनुष्य आत्मकेन्द्रित और अर्थपरायण पशुसे अधिक कुछ नहीं है। वे अिस महत्त्वपूर्ण सत्यको भूल जाते हैं कि मनुष्य मूलतः अध्यात्मपरायण है; पशुकी तरह वह भी मनोविकारोंका शिकार है, लेकिन वह अुनके अूपर अुठ सकता है और आत्माकी पुकार सुन सकता है। सामाजिक और आर्थिक सुधारकी कोअी भी योजना असफल ही होगी यदि वह मनुष्यके आध्यात्मिक अंशकी अुपेक्षा करती है।

अिसी तथ्यको ध्यानमें रखकर गांधीजीने शोषण और वर्ग-संघर्षकी बुराअियोंके हलके तौर पर संरक्षकताका सिद्धान्त पेश किया था। अुन्होंने हमें यह सिखाया कि अमीर लोग अपनेको अपनी संपत्तिका केवल संरक्षक मानें और अुसका अुपयोग मुख्यतः सार्वजनिक लाभके लिअे करें। अुन्होंने कहा कि यदि सब लोग सेवाके कर्तव्यको (अेक शाश्वत नैतिक नियमकी तरह) स्वीकार करें, तो वे धनका संग्रह करनेको पाप मानेंगे। अुस हालतमें धनकी असमानतायें नहीं होंगी और फलतः अकाल तथा भुखमरीकी आपत्तियां भी नहीं होंगी। अुन्होंने पूंजी और श्रमके बीच चले आ रहे शाश्वत विरोधको मिटानेकी — यानी चन्द अमीरोंको, जो राष्ट्रीय सम्पत्तिका अधिकांश दबाये बैठे हैं, नीचे अुतारनेकी और भूखसे पीड़ित आम जनताको अूपर चढ़ानेकी हिमायत और कोशिश की। वे हमेशा कहते थे कि मिल-मालिक मिलोंके अेकाधिकारी मालिक नहीं हैं, मजदूर भी अुनकी मालिकीमें समान भागके अधिकारी हैं। अिसी तरह जमीनकी मालिकी भी जितनी जमीदारोंकी है अुतनी ही किसानोंकी भी है। वे चाहते थे कि धनिक लोग स्वेच्छासे गरीबी स्वीकार करें, ताकि निर्धन जीवनकी जरूरतें हासिल कर सकें। बाअिबिलके अिस आदेशके अनुसार कि 'तू अपनी रोटी अपने पसीनेकी कमाअीसे खा' अुनका यह विश्वास था कि शरीरकी आवश्यकतायें शरीरके जरिये पूरी होनी चाहिये। वे अिस सिद्धान्तके हामी थे कि हरअेकको अपनी रोटीके लिअे जितना परिश्रम आवश्यक हो, अुतना परिश्रम अवश्य करना चाहिये।

अमीर लोग धन-सम्पत्तिका स्वामित्व स्वेच्छापूर्वक छोड़ देंगे और सेवा तथा शरीर-पालनके श्रमका जीवन स्वीकार करनेको तैयार हो जायंगे, अिस बातमें बहुत लोग संदेह व्यक्त करते हैं। बेशक, पश्चिमकी आर्थिक विचारधारामें, जो धन-केन्द्रित है और मनुष्यके साथ बेचने-खरीदनेकी वस्तु जैसा व्यवहार करती है, त्यागके अिस विचारका कोअी स्थान नहीं है। अिसलिअे वे अविश्वासपूर्वक हंसकर सवाल करते हैं कि — "क्या कोअी आदमी कभी सम्पत्तिका सच्चा संरक्षक बन सकता है?" या कि — "संरक्षकताका पालन कौन करता है?" गांधीजीने स्पष्ट शब्दोंमें अिस प्रश्नका अुत्तर दिया है :

> "मेरा संरक्षकताका सिद्धान्त कोअी अस्थायी कामचलाअू युक्ति नहीं है और न वह अन्यायको छिपानेके लिअे तैयार किया गया आवरण है। मेरा विश्वास है कि दूसरे सारे सिद्धान्तोंकी तुलनामें वह ज्यादा टिकाअू साबित होगा। सम्पत्तिके अधिकारियोंने सिद्धान्तको कार्यान्वित नहीं किया है, अिससे सिद्धान्तकी असत्यता सिद्ध नहीं होती; अुससे सम्पत्तिके अधिकारियोंकी कमजोरी भर सिद्ध होती है। अहिंसाके साथ अिसके सिवा कोअी और सिद्धान्त संगत ही नहीं हो सकता।"

संभव है कि अिस अुत्तरसे भी कअी लोगोंका सन्तोष न हो। चंद लोग शायद अुसे वर्गोंके बीच विद्यमान भेदों और असमानताओंको कायम रखनेकी युक्ति समझें। लेकिन अैसा समझना सत्यसे बहुत दूर होगा। गांधीजीने सन् १९२९ में ही चेतावनी देते हुअे कहा था :

> "दो ही बातें हो सकती हैं : अेक तो यह कि पूंजीपति स्वेच्छासे अपनी आवश्यकतासे अधिक सारी सम्पत्ति अुत्सर्ग कर दें और अिस तरह सब लोग सच्चा सुख प्राप्त करें और दूसरी यह कि पूंजीपति समय रहते न चेतें तो जागी

www.vinoba.in

हुअी परन्तु अज्ञानमें पड़ी हुअी तथा भूखसे पीड़ित जनता देशको अराजकताकी अैसी स्थितिमें ढकेल दे जिसे टालनेमें शक्तिशाली सरकारका सैनिक बल भी समर्थ सिद्ध न हो। अिन दोके सिवा कोअी तीसरी बात नहीं हो सकती।"

और आर्थिक समानताका यह अभीष्ट अुद्देश्य सिद्ध करनेका तरीका क्या है? यह तरीका है हृदय-परिवर्तनका। गांधीजीके ही शब्दोंमें :

"लेकिन अहिंसक कार्यकर्ताको अनन्त काल तक प्रतीक्षा करते बैठे रहनेकी जरूरत नहीं है। अिसलिअे जब प्रश्न सीमा पर पहुंच जाता है तो वह खतरा मोल लेता है और सक्रिय सत्याग्रहकी योजना बनाता है। अिस सत्याग्रहका मतलब कानूनकी सविनय अवज्ञा और अिसी तरहकी दूसरी बातें हो सकता है।"

अिसके सिवा गांधीजीने मजदूरोंको शिक्षित करनेकी आवश्यकता पर जोर दिया। अिससे अिनकार नहीं किया जा सकता कि अगर लोग शोषकोंकी बात माननेसे अिनकार कर दें तो शोषण नहीं हो सकेगा। गांधीजीने कहा है कि "गरीबोंके शोषणका अन्त चंद करोड़पतियोंका नाश करनेसे नहीं आयगा, वह गरीबोंका अज्ञान दूर करनेसे और अुन्हें शोषकोंके साथ असहयोग करना सिखानेसे ही हो सकता है।" अिस तरह देखें तो संघर्ष अमीरों और गरीबोंमें नहीं बल्कि बुद्धि और बुद्धिके अभावमें है। अगर श्रमिक अपना संघटन कर सकें और अेक होकर कार्य कर सकें तो निश्चय ही पैसेकी यानी पूंजीवालोंकी तुलनामें अुनका पलड़ा भारी रहेगा। गांधीजीके शब्दोंमें :

"अिसलिअे सवाल अेक वर्गको दूसरे वर्गके खिलाफ खड़ा करनेका नहीं, बल्कि श्रमिकोंको अपने महत्त्वका ज्ञान करानेका है। आखिर धनवान दुनियामें बहुत ही छोटी संख्यामें हैं। ज्यों ही श्रमिकोंको अपनी शक्तिका भान होगा और अुसके बावजूद वे प्रामाणिक व्यवहार करेंगे, त्यों ही धनवान भी सही और न्याय्य व्यवहार करने लगेंगे। ज्यों ही श्रम अपनी प्रतिष्ठा पहिचानेगा त्यों ही पैसेको भी अुसकी अुचित जगह मिल जायगी, — वह श्रमकी सेवाके लिअे घरोहरकी तरह संभाला जाने लगेगा।"

अूपर जो कुछ कहा गया है अुससे यह स्पष्ट हो जाता है कि गांधीजीका संरक्षकताका विचार तीन पायों पर आधारित है :

(१) धन और सम्पत्तिका स्वेच्छापूर्वक त्याग;

(२) शरीर-पालनके लिअे शरीर-श्रम करना चाहिये, अिस बातका धर्मके रूपमें सार्वत्रिक स्वीकार;

(३) श्रमिकोंको अपने पांव पर खड़े होनेकी शिक्षा।

आश्चर्य और आनन्दकी बात है कि सम्पत्तिदान-यज्ञके विनोबाजी द्वारा विकसित रूपकी बुनियादका निर्माण अिन्हीं तीन सिद्धान्तोंसे हुआ है। सम्पत्तिदान-यज्ञके द्वारा विनोबाजी सबको सम्पत्तिकी परतंत्रतासे मुक्त होने और संग्रहके अपने लोभको अुत्तोलित करनेकी सुविधा प्रदान कर रहे हैं। न सिर्फ जिनके पास धन या सम्पत्ति है बल्कि जो लोग भी अपनी जीविका खुद कमाते हैं, अैसे सारे लोगोंसे विनोबाजी कहते हैं कि वे अपनी सम्पत्तिकी मालकियत छोड़ दें और अुसका अेक हिस्सा — छठवां हिस्सा हो तो बेहतर होगा — समाजके लिअे अर्पण करें।

अिस यज्ञकी विशेषतायें अिस प्रकार हैं :

(१) दाताको अपनी आय या खर्चका अमुक हिस्सा आजीवन दान करना पड़ता है।

(२) दान दिया हुआ पैसा दाताके ही पास रहता है।

(३) अुसे यह रकम विनोबाजीकी सलाह और सूचनाके अनुसार खर्च करनी पड़ती है और अुन्हें अुसका वार्षिक हिसाब देना पड़ता है।

सम्पत्तिदान-यज्ञका यह विचार अपरिग्रह या दूसरोंके लिअे या अुनकी ओरसे परिग्रह पर आधारित है। अुसका अुद्देश्य यह है कि अमीर और गरीब भी अपनी मालकियतकी भावना छोड़ दें, अपनी अमीरी और गरीबी साथ-साथ आपसमें बांटकर भोगें और हरअेक अपनी आवश्यकताके अनुसार हरअेक घरमें पड़े हुअे सम्पत्ति-कोषसे जितना जरूरी हो अुतना ले लिया करे। वह अमीरों और गरीबोंको अेक करके अमीरी और गरीबीका विलोप तथा समरस वर्गहीन समाजका निर्माण करना चाहता है।

सम्पत्तिदान-यज्ञने अिस तरह संरक्षकताके सिद्धान्तको व्यावहारिक रूप दिया है। अिस दिशामें काम भी शुरू हो गया है और दो हजार लोग सम्पत्तिदान-यज्ञकी प्रतिज्ञा ले चुके हैं और अुसके अनुसार दान कर रहे हैं। ज्यों-ज्यों यह संदेश घर-घर पहुंचेगा, त्यों-त्यों अधिकाधिक लोग अिस विचारको ग्रहण करेंगे तथा अुस पर अमल करेंगे। और वह दिन दूर नहीं है जब हम अपने देशमें गांधीजीके सपनोंका रामराज्य स्थापित करनेमें सफल सिद्ध होंगे।

२७-९-'५५ सुरेश रामभाअी

(अंग्रेजीसे)

अुड़ीसामें विनोबा — १२

जिसका आधार सत्य है, प्राण अहिंसा है, मार्ग निष्काम कर्मयोग है, और परिणति चिर आनंद है, अुस क्रांतिकी सफलताके लिअे शून्य बननेका संकल्प करनेका अवसर जिस दिन प्राप्त हुआ, अुसे दुनियाने विनोबा जयंती कहा, और स्वयं विनोबाजीने भूमि-क्रांति दिन कहा। अिस क्रांतिका नेतृत्व अुसके हाथमें है जो जड़को चेतन बना देता है, नाचीजको चीज बना देता है। अिसीलिअे वह जिसके जरिये यह काम करवा रहा है अुसने भूमि-क्रान्तिके दिन कहा, "मुझे कभी अिस कामका कोअी बोझ ही महसूस नहीं होता है। क्योंकि अिस कामके लिअे अैसे नेता प्राप्त हुअे हैं जिनसे बढ़कर नेता सारी दुनियामें कोअी नहीं हो सकते। अगर परमेश्वर नेता न होते और अिस कामका जरासा भी बोझ हमारे कंधों पर पड़ता तो हम टिक नहीं सकते थे। मैं मानता हूं भगवानकी प्रेरणा न होती तो ये सारे छोटे-छोटे कार्यकर्ता निष्काम भावसे सतत अितना बड़ा काम नहीं कर पाते।" कोरापुट जिलेमें पिछले तीन चार महीनोंमें बारिशमें जंगलोंमें कअी कार्यकर्ता गांव-गांव घूमकर भूमि-क्रान्तिका संदेश सुना रहे हैं। जिन्हें न कीर्तिकी चाह है न नेतृत्वकी आकांक्षा है और जिनके लिअे निष्काम कर्म जैसी अत्यन्त दुर्लभ वस्तु सुलभ हो गयी है, अुन कार्यकर्ताओंका विनोबाजीने हृदयपूर्वक अभिनंदन किया।

११ सितंबरको प्रातःकाल गुणपुरमें वंशधाराके किनारे विनोबाजीका जन्म-दिन मनाया गया। श्रीमती मालतीदेवी चौधरीके अिस मधुर रवींद्र गीतसे कार्यक्रमका आरंभ हुआ — 'हे चिर नूतन आजि अेअि दिनेर प्रथम गाने। जीवन आमार अुठुक विकासि तोमार पाने'। श्रीमती रमादेवी चौधरीने विनोबाजीकी आरती अुतारी। अुसके बाद गांधीजीके आदेशके अनुसार गुजरातसे आकर गत पचीस सालसे अुत्कलकी सेवा करनेवाले श्री अीश्वरलाल व्यास तथा श्री गोपबंधु चौधरीने आशीर्वादात्मक भाषण दिया। फिर श्री जयप्रकाश नारायणने अपने भाषणमें करोड़ों दुखियोंकी, पीड़ितोंकी और भूमिपुत्रोंकी प्रार्थनाको शब्दोंमें प्रकट करते हुअे कहा, "स्वराज्यके बाद जिस शक्तिके पैदा होनेकी हम सब राह देख रहे थे वह अब पैदा हो रही है। दुनियाके अितिहासमें अैसा शायद कभी नहीं हुआ कि अेक महापुरुष आया, लोगोंको रास्ता दिखाकर चला गया, फिर दूसरा महापुरुष आया और अुसी रास्ते पर लोगोंको लेकर आगे बढ़

www.vinoba.in

रहा है। लेकिन अिस पुण्यभूमिका यह सौभाग्य है कि राष्ट्रपिता गांधीजीके बाद विनोबाजी हमें मिले।"

अंतमें विनोबाजीने अपने भाषणमें कहा, "हमारे जीवनमें अेक यज्ञकी पूर्तिके बाद (स्वराज्य-प्राप्तिके बाद) हमें दूसरा यज्ञ शुरू करनेका भाग्य मिला है। तपस्यासे मनुष्यको ताप नहीं होता है बल्कि आनंद होता है। क्योंकि अुससे निर्मिति होती है। हम जो काम कर रहे हैं वह कोअी साधारण कार्य नहीं है, बल्कि यज्ञकार्य है अिसलिअे वह हृदय-शुद्धि पर निर्भर है। आज यहां पर ग्रामदानसे मालकियतका विसर्जन हो रहा है। अिसका यहां पर कुछ विरोध भी हो रहा है यह देखकर हमें खुशी होती है। क्योंकि पुराना समाज व्यक्तिगत मालकियतको अेक पवित्र वस्तु मानता है। मैं यह बात समझ सकता हूं कि किसीने परिश्रमसे जो चीज कमाअी अुसे हिंसासे छीन लेना अेक अन्याय होता है। लेकिन हम चाहते हैं कि वह चीज अुसीकी अिच्छासे अुसके हाथसे गिरनी चाहिये। व्यक्तिने परिश्रमपूर्वक जो चीज प्राप्त की अुसे छोड़नेमें ही अुसे अपना परिश्रम सार्थक मालूम होगा तो हमने क्रांति की अैसा कहा जायगा।"

अपने जन्म-दिनके प्रवचनमें विनोबाजीने विनोदमें कहा था, "मैं न वृद्धताका अनुभव कर रहा हूं न जवानीका। मुझे तो अनुभव होता है कि मेरा बचपन ही अभी समाप्त नहीं हुआ है। माता-पिताके मना करने पर भी बारिशमें घूमना यह हमारा बचपनका लक्षण यहां पर सबने देखा।" गत मासकी विनोबाजीकी यात्रा अिस कथनका प्रत्यक्ष प्रमाण है। अेक मास पूर्व विनोबाजीने अैसे प्रदेशमें प्रवेश किया था जहां पर आधुनिक मानवके निर्माण किये हुअे कोअी साधन अुपस्थित नहीं थे। अंबादला छोड़कर घने जंगलोंमें से होते हुअे विनोबाजी जगदलपुर जा रहे थे। रास्तेमें १९ नदियां और नाले पार करने पड़े। कहीं कमर तक पानी, कहीं छाती तक पानी, तो कहीं घुटनों तक कीचड़। तबसे यात्रा अैसे रास्ते पर चली जिसे रास्ता अिसीलिअे कहा जा सकता है कि अुससे अेक गांवसे दूसरे गांव तक जा सके। वर्ना वहां पर रास्तेके कोअी लक्षण मौजूद नहीं थे। अिस प्रदेशमें बहुत सारे गांव ग्रामदानमें प्राप्त हुअे हैं। वर्षाका वैभव लेकर बहनेवाली वंशधाराने रोकनेकी बहुत कोशिश की, लेकिन क्रांति-पथिक रुका नहीं। वेगवती वंशधाराको पारकर विनोबाजी हनुमंतपुर पहुंचे। यह वही स्थान था जहां पर जंगली हाथियोंके तथा शेरोंके अुपद्रवसे कअी गांव अुजड़ गये थे। ग्रामदानमें प्राप्त हुअे चंद्रपुर गांवके लोग निविड़ अरण्यमें, घनघोर वर्षामें पंद्रह बीस मील चलकर विनोबाजीके हाथोंसे पुर्नावितरणके प्रमाणपत्र लेनेके लिअे हनुमंतपुर पहुंचे। चंद्रपुर जैसे बड़े गांवोंके लोगोंके ग्रामदानकी सराहना करते हुअे विनोबाजीने कहा, "कुछ लोग अैसे होते हैं जो कालको पहचाते नहीं और हमेशा भूतकालमें रहते हैं। लेकिन काल पुरुष अैसा मजबूत होता है कि वह सबको अपनी पहचान कराता है। जिसको अुसकी पहचान होती है वह बुद्धिमान कहलाता है और जिसे पहचान नहीं होती है वह शरण आता है। जब अेक विचारकी हवा फैलती है तो कोअी अुससे बच नहीं सकता। हमारा विश्वास है कि ग्रामदानकी हवा सारे हिन्दुस्तानमें फैलेगी और हिन्दुस्तानके कुल गावोंके परिवार बनेंगे।"

हनुमंतपुरसे आगे बढ़ते हुअे विनोबाजी अेक नदीके किनारे पहुंचे। नदीका पानी अितना बढ़ गया था कि पार करना असंभव था। किनारे पर अेक जरापा नामका छोटासा गांव था, जहां पर विनोबाजी ठहरे। गांववालोंने कभी आशा नहीं की थी कि विनोबाजी अुनके गांवमें आयेंगे। परंतु अुन्होंने ग्रामदान देकर अपनी मांग भगवानके दरबारमें पेश की थी जो पूरी की गयी। गांववाले जंगलसे बांस लाये, पेड़ोंकी छाल कूटकर अुसकी रस्सी बनाअी और दो डोंगे तैयार किये। गांववाले तथा विनोबाजीके साथियोंने सतत सात आठ घंटों तक तैरकर डोंगा अिस पारसे अुस पार किया और विनोबाजीको सारे सामानके सहित अुस पार पहुंचा दिया। अुनका सारा पराक्रम देखकर विनोबाजीने अुस रातको प्रार्थनाके पश्चात् सबको हृदयसे धन्यवाद दिया। परंतु अुन्हें अुस परिश्रमका कोअी बोझ नहीं महसूस हो रहा था बल्कि अुसीमें आनंद महसूस हो रहा था। बावजूद अिन सब कठिनाअियोंके यात्रा आगे बढ़ती रही। लेकिन नदीके कारण गाड़ी चौबीस घंटा लेट हुअी। आगेके चार पांच पड़ावों पर आस-पासके गांवोंसे लोग बारिशकी मार सहते हुअे भाषण सुननेके लिअे आते थे लेकिन अुन्हें निराश होकर लौटना पड़ता था। क्योंकि विनोबाजी अुस पड़ाव पर दूसरे दिन पहुंचते थे। अुन दिनोंमें न कोअी अखबार मिला न कोअी चिट्ठी। दुनियामें क्या हो रहा है अिसका कोअी पता नहीं चल सकता था। विनोबाजीने विनोदमें कहा, "लोग हमसे कहते हैं कि आप दुनियासे कटे हुअे थे। लेकिन हम कहते हैं कि दुनिया हमसे कटी हुअी थी। हम तो अपने स्थान पर थे।" मलेरियाके लिअे मशहूर जंगलका प्रदेश, अूपरसे सतत वर्षा, नीचेसे नदी नाले, हाथियोंकी, शेरोंकी और सर्पोंकी संगति। यह सब होते हुअे भी सबका स्वास्थ्य तथा अुत्साह कायम रखनेवाली यह आनंददायी यात्रा अेक संत वचनकी याद दिलाती है—'तुम आगे बढ़ते रहो, संभालनेवाला आगे पीछे मौजूद है।'

गुडारीकी प्रार्थना-सभामें ग्रामोद्योगोंके बारेमें विनोबाजीने कहा, "अिन दिनों सरकार भी अपनी योजनामें ग्रामोद्योगोंको स्थान दे रही है यह बड़ी खुशीकी बात है। परंतु सरकार बेकारीके असुरको मिटानेके लिअे ग्रामोद्योगका सहारा ले रही है। असुरके भयसे भी क्यों न हो पर अेक अच्छा काम हो रहा है तो हम अिसे पसंद ही करते हैं। परंतु हम चाहते हैं कि वह काम भगवानकी भक्तिसे हो। हम मानते हैं कि अिस देशकी आर्थिक योजनामें ग्रामोद्योगोंको स्थिर करना है। अिसलिअे अिस देशके आयोजनमें ग्रामोद्योगोंको अेक महत्त्वपूर्ण विषय और जीवनका अेक अंश मानकर स्थान देना चाहिये। गांव-गांव घूमकर सारी परिस्थिति देखकर हमने कुछ सिद्धांत बनाये हैं। बिना ग्रामोद्योगके ग्रामका अुत्थान नहीं हो सकता है। सुव्यवस्थित योजनाके बिना ग्रामोद्योग नहीं चलेंगे। सुव्यवस्थित योजना ग्राम-समितिके बिना नहीं हो सकती है और ग्राम-समितिको गांवमें तब तक मान्यता नहीं मिलेगी जब तक गांवमें जमीनका समान बंटवारा नहीं होगा। जब तक गांवमें विषमता और भेद मौजूद है, तब तक अैसी ग्राम-समिति नहीं बन सकती है जो सारे गांवका विश्वास प्राप्त कर सके।

कोरापुटके गांव-गांवमें 'आम गांरे भूमिहीन रहिबे नाही, रहिबे नाही' और 'आम गांरे भूमि मालिक रहिबे नाही रहिबे नाही' के नारे गूंज रहे हैं। अिस बारेमें समझाते हुअे डेरीगांकी सभामें विनोबाजीने कहा, "हम भूमिहीनोंकी संख्या शून्य बनाना चाहते हैं और भूमिमालिकोंकी संख्या भी शून्य बनाना चाहते हैं। भूमि-सेवकोंकी संख्या बढ़ाना चाहते हैं। अब आप लोगोंको अेक नया नारा गाना चाहिये—आम गांरे भूमि मालिक रहिले नाही रहिले नाही। (हमारे गांवमें भूमि-मालिक नहीं रहे।)

२१ सितंबरसे २९ तक विनोबाजी कुजेंद्रीमें रहेंगे। कुजेंद्री कोरापुटकी जनताके हृदय-सम्राट् श्री विश्वनाथ पट्टनायकका तपस्या-स्थान है। यहां पर सर्व-सेवा-संघके प्रमुख सदस्योंके साथ तथा अुत्कल प्रांतीय भूदान-कार्यकर्ताओंके साथ कोरापुटके ग्रामदानमें प्राप्त हुअे गांवोंके क्षेत्रमें नवनिर्माणके बारेमें चर्चा होगी। अब तक कोरापुट जिलेमें ५०१ पूरे गांव मिले हैं।

२२-९-'५५ नि० दे०

www.vinoba.in

हरिजनसेवक

२९ अक्तूबर १९५५

हमारी राष्ट्रीय कसौटी

राज्य-पुनर्रचना कमीशनकी रिपोर्ट प्रकाशित हुअी तबसे अनेक मित्र पूछते हैं, आप अिस प्रश्न पर 'हरिजन' में कुछ लिखेंगे या नहीं? आपको वह रिपोर्ट कैसी लगी?

अुनका यह प्रश्न बिलकुल स्वाभाविक है। भारतीय संघके राज्योंकी नवरचनाका काम कितना दूरगामी महत्त्व रखता है, यह तो बरसोंसे अुसने देशकी जनतामें जो खलबली पैदा कर रखी है, अुस परसे भी समझमें आ जाता है। अिस पत्रमें राज्य-पुनर्रचनाके प्रश्नसे संबंध रखनेवाले मुद्दों पर कभीका कहा जा चुका है। वह यह कि लोकजीवनके शासन, न्याय, शिक्षा वगैरा सारे क्षेत्रोंमें अुस अुस प्रदेशकी संविधान द्वारा तय की हुअी भाषाका अुपयोग करनेकी व्यवस्था तुरन्त होनी चाहिये; अिसके लिअे यदि भाषावार राज्य-रचना करना जरूरी मालूम हो तो वैसा किया जाना चाहिये। अिसमें अेक मुख्य वस्तु हमें भूलनी नहीं चाहिये कि हम सब अेक भारत देशके नागरिक हैं; भाषा या रीति-रिवाजके फर्कके कारण हमारी अखंड भारतीय नागरिकता मिट नहीं जाती। जैसा कि गांधीजीने कहा था:

> "बाहरकी दुनिया हमें गुजराती, महाराष्ट्री, तामिल वगैराके नाते नहीं पहचानती, केवल भारतीयोंके नाते ही पहचानती है। अिसलिअे अेकताको भंग करनेवाली सारी प्रवृत्तियोंको हमें निश्चयपूर्वक दबाना चाहिये और भारतीयोंकी तरह ही आचरण करना चाहिये। अिस मुख्य विचारको ध्यानमें रखकर भाषाके आधार पर प्रान्त-रचना की जाय, तो वह शिक्षा और व्यापारको बढ़ानेवाली सिद्ध होगी।"*

हमारे देशके लोगोंने स्वराज्य-आन्दोलनके युगमें अिसी ढंगसे काम किया है। यह बात सबको याद रखनी चाहिये कि १९१५-२० के अर्सेमें अेक बड़ा फर्क यह हुआ कि अंग्रेजी भाषामें काम करनेवाली अुदार या नरम राजनीतिका अन्त आया और आम जनताकी भाषाओं द्वारा काम करनेवाली गरम या स्वराज्यकी राजनीतिका युग आरंभ हुआ। अिस फर्कका सबसे ध्यान देने लायक लक्षण यह था कि अिस राजनीतिके प्रवर्तकोंने भाषाके आधार पर कांग्रेस-प्रदेश रचे और अुस अुस प्रदेशकी भाषा द्वारा काम किया; और अखिल भारतीय कांग्रेसने हिन्दी-हिन्दुस्तानीको अिन प्रदेशोंकी अेक आन्तर-भाषा मानकर अुसके जरिये अपना काम चलानेका निर्णय किया।

अुदारपंथियोंके अनुज जैसे कुछ अंग्रेजी पढ़े हुअे कांग्रेसजन भी अभी तक अंग्रेजी द्वारा अेकता कायम रखनेके गीत गाया करते हैं; अुनके ध्यानमें अूपरकी हकीकत जितनी आनी चाहिये आअी नहीं है। अुस युगमें लोगोंकी अनेक प्रादेशिक भाषाओंके जरिये अेक राष्ट्रकी भावना और अेक प्रजाकी भावनाका भी विकास हो सका, यह भी अेक अैसा ही ध्यान देने लायक मुद्दा है। भाषा अेक साधन है; अुसे साध्य माननेकी गलती नहीं करनी चाहिये। अुदाहरणके लिअे, कुछ लोग यह मानते हैं कि स्वभाषा शासन, शिक्षा वगैराका माध्यम बने या भाषावार राज्य बनाये जायं, तो देशकी अेकता कायम नहीं रहेगी। अैसे अपरिपक्व विचारोंकी आज चर्चा होती है, अुसका कारण यही माना जायगा कि भारतकी पिछली पीढ़ीके कार्यका सच्चा महत्त्व अभी हमारे ध्यानमें नहीं आया है। सच्ची लोकशाहीकी बुनियाद देशमें डालनी हो, तो भारतके लोगोंकी महान मातृभाषाओंको योग्य स्थान मिलना चाहिये। और राज्योंकी पुनर्रचना करते समय अिस चीजकी अुपेक्षा नहीं की जा सकती।

स्वतंत्रता आनेके बाद स्वराज्य आन्दोलनके युगका यह अनुभव और अुसमें रहा भारतके प्रदेश-राज्योंकी पुनर्रचनाका सिद्धान्त किसी हालतमें छोड़ा नहीं जा सकता था। दूसरी ओर, प्रत्यक्ष व्यवहारकी दृष्टिसे भी यह जरूरी था कि देशका नकशा नये सिरेसे तैयार किया जाय। देशी राज्योंके विलीन हो जानेके बाद संविधानमें अ, ब, क विभाग करके राज्योंकी जो रचना की गअी थी वह अस्थायी थी। अनुकूल समय आने पर तुरन्त अधिक स्थायी रचना करनेकी जरूरत तभीसे मान ली गअी थी। लेकिन जब देशके आर्थिक विकासके योजनाबद्ध कार्यक्रम हाथमें लिये जाने लगे, तब यह आवश्यकता और भी तीव्र रूपमें अनुभव की जाने लगी। अिसलिअे हाथमें लिये हुअे प्रथम महत्त्वके कामोंसे फुरसत मिलते ही सरकारने पिछले साल अेक कमीशन नियुक्त किया, जिसकी रिपोर्ट अब प्रजाके सामने आ गअी है। अिसके लिअे कमीशनके सदस्योंको हमें धन्यवाद देना चाहिये। अुस रिपोर्टमें सदस्योंने जो विवेचन और विचार पेश किये हैं, वे भारतके अितिहासका अेक कीमती दस्तावेज सिद्ध होंगे। स्पष्ट है कि अुस दस्तावेजका भारतके भविष्य पर भारी असर होगा।

अुसमें कमीशनने भारतका नया नकशा रचनेके बुनियादी मुद्दे स्पष्ट किये हैं, जो अुसका विशेष प्रशंसनीय काम माना जायगा। अुसने यह सिफारिश की है कि राज्योंके मौजूदा तीन वर्ग खतम करके समान अधिकारवाले कुल १६ राज्य बनाये जायं। दिल्ली, अंडमान-निकोबार और मणिपुर अिन तीन प्रदेशोंको केन्द्रके मातहत अलग दर्जा दिया गया है। अिस प्रकार यह महत्त्वकी बात है कि देशी राज्योंके विलीनीकरणको अिस सिफारिशने अेक कदम आगे बढ़ा दिया है।

दूसरी बड़ी बात यह है कि कमीशनने भाषावार प्रदेश-रचनाके सिद्धान्तको स्वीकार किया है और अुस सिद्धान्तका अर्थ करनेमें जो अुलझन खड़ी हुआ करती थी, अुसकी चर्चा करके अुसे दूर कर दिया है। यह कमीशनका खास काम माना जायगा। अुदाहरणके लिअे, अुसने बताया कि अिस सिद्धान्तका यह अर्थ नहीं कि अेक भाषा बोलनेवाले सारे लोगोंके समूचे प्रदेशका अेक राज्य बनाया जाय। फिर भारतके जो राज्य बनेंगे वे कोअी स्वतंत्र भूभागवाले अलग राष्ट्र नहीं होंगे, बल्कि भारतके अेक महाराज्यके अुपराज्य होंगे। अुनका अस्तित्व अुस महान् गणराज्यकी अखंड सार्वभौमताके भीतर रहकर स्वतंत्रतापूर्वक अपना विकास करनेवाले अंगोंके रूपमें होगा। अिसलिअे कमीशनने अिस बातका भी साफ अिनकार किया है कि कोअी भाषा-प्रदेश भारतका अलग स्वतंत्र प्रदेश होगा और अुसका कोअी विशेष अलग भूगोल, अलग नागरिकता, राष्ट्रीयता अथवा स्वतंत्र सत्ता होगी। अैसा मानना प्रान्त-रचनाका गलत अर्थ करना होगा।

यह सच है कि राजकाज तथा जनताके व्यवहार, शिक्षा वगैरामें अुस अुस प्रदेशकी जनताकी अेक भाषा हो तो न केवल बड़ी सुविधा होती है, बल्कि भारतका विशाल जनसमूह सच्ची लोकशाहीके आधार पर अपनी जीवन-पद्धतिका निर्माण कर सकता है। फिर भी अैसा करनेमें देशके समग्र हितकी दृष्टिसे और अुसकी अखंड अेकताकी दृष्टिसे यदि आर्थिक और व्यवस्था-संबंधी सुविधा-असुविधायें, आपत्तियां अथवा भयके कारण पैदा हों तो

* देखिये 'दिल्ली-डायरी', ता० २५-१-'४८।

www.vinoba.in

अुन पर भी विचार करना होगा। अिसलिअे देशका नया नकशा रचनेमें संपूर्ण प्रश्नके सारे पहलुओंका विचार करना होता है।

भारतके स्वतंत्र हो जानेके बाद भाषावार राज्य-रचनाके सिद्धान्तके साथ अिन बातों पर खास जोर दिया गया, और कमीशनने अपनी रिपोर्टमें अिस पर अपनी मुहर लगा दी। अिसका कारण यह है कि राज्य-रचनाके लिअे भाषाके आधार पर ही अेकमात्र अतिशय भार देकर अिस प्रश्न पर न केवल बालकी खाल निकाली जाने लगी, बल्कि देशकी अखंड अेकता और भारतके राज्योंके पीछे रही अेक संयुक्त और सहयोगी परिवारकी भावनाको हानि पहुंचानेवाले रवैये भी अख्तियार किये जाने लगे थे। कहा जायगा कि अिसके खिलाफ लाल बत्ती दिखा कर कमीशनने वातावरणको काफी साफ कर दिया है।

स्वराज्य-प्राप्तिके बाद जो अेक दूसरा बुनियादी मुद्दा अूपर आया, वह राजनीतिक मुद्दा है। पार्लमेन्टकी राज्यसत्तामें सारे प्रदेश-राज्य अथवा भारतके महाराज्यके अुपराज्य लगभग समान हिस्सेदार बनें — अर्थात् कोअी अतिशय बड़ा न हो कि पार्लमेन्टमें अुसका प्रतिनिधित्व बहुत वजनदार बन जाय। अिस सिद्धान्तकी रक्षा न हो, तो व्यर्थमें अीर्ष्या-द्वेष पैदा हो सकता है। अिस दूसरे सिद्धान्तकी ओर कमीशनको अधिक ध्यान देना चाहिये था। अुसके अेक सदस्य श्री पणिक्करने यह दिखानेके लिअे अेक खास नोंध लिखी है, जिसके लिअे वे हमारे धन्यवादके पात्र हैं। नये नकशेमें भारतके जो राज्य बनते हैं, वे बहुत छोटे या बहुत बड़े नहीं होने चाहिये। अेक-भाषा-भाषी प्रदेश बहुत बड़ा हो, तो चौतरफा विचार करके अुसके अुचित विभाग कर देने चाहिये; अिसके विपरीत अेक-भाषा-भाषी होने पर भी यदि लोगोंके छोटे छोटे अलग राज्य-विभाग हों तो अुन्हें अेक करनेकी बात सोचना चाहिये। जैसे गुजराती-भाषी प्रदेश (कच्छ, सौराष्ट्र और गुजरात)।

राज्य-पुनर्रचनाका विचार करते समय अेक तीसरा मुद्दा भी ध्यानमें रखा गया है। वह है आर्थिक सुव्यवस्थाका। अिसमें दो-तीन बातोंका समावेश होता है: (१) राज्यकी आय अथवा अुसकी आर्थिक शक्ति; (२) अुसके विकासकी दृष्टिसे अुसकी साधन-संपत्तिकी पर्याप्तता। स्वतंत्रता आनेके बाद सच पूछा जाय तो अिसी बातने विभिन्न राज्योंमें अलगावकी भावना बढ़ाअी है और वह अुनके बीच खींचातानी व मनमुटाव पैदा कर रही है। सच्चा भयस्थान यही चीज है, न कि भाषाके आधार पर राज्य-रचनाका सिद्धान्त। परंतु आर्थिक लाभ और लोभको दृष्टिमें रखकर भाषा तथा अलग अलग अितिहास, भूगोल और संस्कृतिके नाम पर जो बातें की जाती हैं, अुससे भाषाका सिद्धान्त व्यर्थमें ही बदनाम होता है।

जो राज्य रचा जाय अुसके विषयमें यह देखना चाहिये कि अुसकी आर्थिक शक्ति और विकासके लिअे साधन-संपत्तिकी पर्याप्तता कैसी है। परंतु अिसका फैसला वह राज्य अेक अलग राष्ट्र है अिस दृष्टिसे नहीं, बल्कि संयुक्त कुटुम्बकी मिली-जुली जायदादकी न्यायपूर्ण व्यवस्था करनेकी दृष्टिसे किया जाना चाहिये। अिस प्रश्न पर अिस न्यायसे विचार करना चाहिये कि सब राज्य अेक राष्ट्रके अंग हैं। अन्तमें तो केन्द्रीय सरकारका बड़ा घर सब अंगोंको घटनेवाली रकम, मदद या हिस्सा देगा ही, अैसा अुस राज्य और सब राज्योंको समझना चाहिये।

कमीशनने अैसे त्रिविध न्यायकी व्यापक दृष्टिसे अपने प्रश्न पर गहरा विचार करके हल निकाला है। अुसके आधार पर अब पार्लमेन्टको आगे बढ़ना है। अैसा नहीं मानना चाहिये कि कमीशनके सुझाये हुअे हलमें कोअी सुधार हो ही नहीं सकता। यह भी नहीं कहा जा सकता कि अुसमें सुधारकी गुंजाअिश ही नहीं है; क्योंकि यह प्रश्न अैसा है जिस पर अन्तमें समझौता ही खोजना होगा। कमीशनका हल सबको समान रूपसे पसन्द आ जाय, यह असंभव नहीं तो कठिन जरूर है। अिसलिअे अुसमें जो भी सुधार किया जाय, वह यथासंभव सर्वसंमतिसे करना ही ठीक होगा।

अिसमें बम्बअी शहरका अुदाहरण अेक नमूना बन गया है। अैसा लगता है कि अिसमें कमीशन अपने आर्थिक पहलूके विचारमें जरूरतसे ज्यादा बह गया। राष्ट्रीय अेकताके नाम पर द्विभाषी राज्य बनानेकी सिफारिश करके अुसने धोखा खाया है। अब दिल्लीमें बम्बअीका प्रश्न हल करनेके लिअे जो सलाह-मशविरा चल रहा है, अुसमें से साररूप जो बात निकलती है वह बात अगर कमीशनने ही पहलेसे कही होती तो अच्छा होता।

दिल्लीमें जो बात सोची गअी कही जाती है, वह कोअी नअी शोध नहीं है। कांग्रेसने बम्बअी शहरका अलग प्रान्त बनाया अिस बातको आज छोड़ दें तो भी पिछले दस वर्षोंमें दो मंडलों — (१) दर-कमीशन और (२) ज० व० प० समिति — ने वह बात स्वीकार की थी। अिन दो मंडलोंके विचारको कबूल करके अगर अुसके अनुसार कमीशनने अपना विचार आगे बढ़ाया होता तो वह स्वयं ही कहता कि महाराष्ट्र विदर्भके साथ अेक राज्य बन सकता है, लेकिन अुसमें बम्बअी शहर नहीं रह सकता, क्योंकि अितिहास, भाषा, व्यवस्था, विकास, अुद्योग-धंधे, अर्थ-रचना वगैराकी दृष्टिसे देखने पर बम्बअीको कोअी विशेष भाषा-भाषी भाग मानना सही नहीं है। आन्ध्रको जिस तरह मद्रास शहरके विषयमें स्पष्टता कर दी गअी थी, अुसी तरह महाराष्ट्र और गुजरातको भी अुन दोनोंके बीचकी रस्साकशीका शिकार बने हुअे पचरंगी बम्बअी शहरके बारेमें स्पष्टता करके बम्बअी राज्यकी पुनर्रचनाके संबंधमें कहा जा सकता था। अब आशा है कि कांग्रेस और केन्द्रीय सरकार यह सुधार करके देशके अिस महान कार्यको आगे बढ़ावेगी।

भारतकी स्वराज्य यात्राके कूचमें राज्य-पुनर्रचनाका कार्य अेक भारी मंजिल कहा जायगा। वह मंजिल देशको शांतिसे, समझदारीसे, अुदारतासे, और हम सब अेक राष्ट्रकी सन्तान हैं, अिस परम भावनाको ध्यानमें रखकर पूरी करनी है। सारी दुनियाके देशोंकी नजर अिस समय हम पर है; वे देख रहे हैं कि यह काम हम शांतिसे, होशियारीसे, राष्ट्रीय जिम्मेदारीके भानसे और सच्ची लोकशाहीकी नीतिसे किस तरह पूरा करते हैं।

२१-१०-'५५ **मगनभाई देसाई**

(गुजरातीसे)

भाषावार प्रान्त

लेखक : **गांधीजी**; संपा० **भारतन् कुमारप्पा**

कीमत ०-४-० डाकखर्च ०-२-०

शिक्षाका माध्यम

लेखक : **गांधीजी**; संपा० **भारतन् कुमारप्पा**

कीमत ०-४-० डाकखर्च ०-२-०

राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी

[दूसरा संस्करण]

लेखक : **गांधीजी**; अनु० **काशिनाथ त्रिवेदी**

कीमत १-८-० डाकखर्च ०-६-०

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद-१४

www.vinoba.in

भारतकी भाषायें और बोलियां

[पूनाके डेक्कन कॉलेज पोस्ट-ग्रेज्युअेट अेन्ड रिसर्च अिन्स्टिटचूट नामक संस्थामें भाषाशास्त्रके शरत्कालीन वर्गके अुद्घाटनके समय ता० १७-१०-'५५ को राजभाषा कमीशनके अध्यक्ष श्री बी० जी० खेरने जो भाषण दिया, अुससे नीचेका हिस्सा दिया गया है।]

१

मुझे लगता है कि हमारे देशकी बड़ी और छोटी भाषाओं और बोलियोंमें, जो मानो 'भारतकी भाषासंबंधी तसवीर' पेश करती हैं, भाषाशास्त्रके अध्ययनके लिअे विशाल सामग्री अुपलब्ध होनी चाहिये। भिन्न भिन्न भाषाओं और बोलियोंकी संख्याके सिवाय, हमारे देशमें विभिन्न भाषाओं द्वारा सिद्ध की हुअी विकासकी अवस्थाओंका विस्तार भी अत्यन्त व्यापक है। अेक सिरे पर पहाड़ों और कबाअिली प्रदेशोंमें रहनेवाले हमारे कुछ देशवासियोंकी आदिम रूपकी बोलियां हैं, जिनमें केवल मौखिक परम्परा ही चली आअी है और जिनका अपना कोअी लिखित साहित्य नहीं है। दूसरे सिरे पर भारतके संविधानमें दर्ज की गअी १४ महान भाषायें हैं, जिनमें से कुछ भाषायें पश्चिमकी कुछ आगे बढ़ी हुअी भाषाओंके बोलनेवालों जितने ही बड़े जनसमुदायों द्वारा या अुनसे भी बड़े समुदायों द्वारा बोली जाती है।

अिन १४ भाषाओंमें सबसे व्यापक रूपमें बोली जानेवाली भाषा हिन्दी है, जिसका स्थान दुनियाकी भाषाओंमें बोलनेवालोंकी संख्याके अनुसार चीनी और अंग्रेजी भाषाके बाद तीसरे नंबर पर आता है। अिन १४ भाषाओंका साहित्य-भण्डार अत्यन्त विशाल है और अुनकी साहित्यिक परंपरा कअी सदियोंसे, कुछ भाषाओंकी तो दो हजारसे अधिक वर्षोंसे, चली आ रही हैं।

पिछले १०० वर्ष या अिससे अधिकके ब्रिटिश राज्यमें अिन सारी भाषाओंको कम-ज्यादा रूपमें ग्रहण-सा लग गया और अुनकी वृद्धि और विकास, जो आधुनिक औद्योगिक और वैज्ञानिक प्रगतिकी जरूरतों और अुत्तेजनके जवाबमें कुदरती तौर पर होना चाहिये था, रुक गया। पिछले १०० वर्षोंमें अंग्रेजी भाषा, हमारे अंग्रेज शासकों द्वारा अपनाअी गअी शिक्षा-नीतिके कारण और अंग्रेजीको मिली हुअी सरकारी प्रतिष्ठाके कारण, दिनोंदिन अधिक मात्रामें अिन देशी भाषाओंका स्थान देशके लगभग संपूर्ण सार्वजनिक जीवनमें लेती गअी।

भाषायें सामान्यतः अपने बोलनेवाले समाजोंके परस्पर व्यवहार और संबंधकी आवश्यकताओंके अनुसार विकास करती हैं। लेकिन अंग्रेजीने हमारे देशमें अखिल भारतीय स्तर पर परस्पर व्यवहारका अेकमात्र साधन होनेके कारण अथवा सार्वजनिक तथा खानगी जीवनमें सत्ता या प्रतिष्ठाका स्थान भोगनेवाले सारे लोगोंकी अेकमात्र आन्तर-भाषा होनेके कारण अस्वाभाविक दर्जा प्राप्त कर लिया। अंग्रेजी जैसी अेक समृद्ध और सुविकसित भाषाके मिल जानेसे, जो अखिल भारतीय व्यवहारका अेकमात्र साधन थी, शासनतंत्रकी राजभाषा थी, सारे अुच्च शिक्षणका माध्यम थी और सारे बौद्धिक धंधोंकी भी भाषा थी, अिसमें कोअी आश्चर्य नहीं कि देशी भाषायें कमजोर पड़ गअीं और सामाजिक जीवनकी जरूरतोंके लिअे काफी समृद्ध और सुनिश्चित शब्दभण्डारका विकास नहीं कर सकीं, हालांकि वह अैसा जमाना था जिसमें वैज्ञानिक ज्ञानकी प्रगतिने देशके रहन-सहनकी भौतिक परिस्थितियोंमें बड़ी क्रान्ति कर डाली थी। नतीजा यह है कि आज अब देशी भाषाओंके लिअे अंग्रेजीकी जगह लेने और अुसे अस्वाभाविक स्थानसे हटानेका समय आया है, तब अिन भाषाओंकी बहुतसी कमियां हमें पूरी करनी होंगी।

मैं मानता हूं कि अिनमें से हरअेक भाषा स्वाभाविक रूपमें अत्यन्त अटपटे या गूढ़ विचारों, कल्पनाओं अथवा अर्थकी बारीकियोंको व्यक्त करनेमें पूरी तरह समर्थ है। कोअी भाषा अपने वातावरणके लिअे विचारोंकी अभिव्यक्ति और व्यवहारका पूर्ण साधन होती है, और यह मान लेनेका कोअी अुचित कारण नहीं है कि कोअी अच्छी तरह विकसित भाषा — भारतकी समृद्ध प्रादेशिक भाषाओंकी बात तो जाने दें — अुपयुक्त परिस्थितियोंमें अैसा कोअी विचार या भावना व्यक्त करनेमें असमर्थ हो सकती है, जिसे किसी भाषा-समूहके सदस्य व्यक्त करना चाहते हैं। महात्मा गांधीने विवादास्पद प्रश्नोंकी जड़ तक पहुंचनेवाली अपनी आश्चर्यजनक बुद्धिसे ठेठ १९२८ में कह दिया था: "अिससे बड़ा कोअी अन्धविश्वास नहीं हो सकता कि कोअी विशेष भाषा विकास करनेमें या गूढ़ अथवा वैज्ञानिक विचारोंको व्यक्त करनेमें असमर्थ हो सकती है।"

अब स्वराज्य प्राप्तिके बाद जो समस्या हमारे सामने खड़ी होती है, वह हमारी भारतीय भाषाओंका अैसा विकास करनेकी है, जिससे विज्ञानकी प्रगति, विद्याओंके विकास या हमारे राष्ट्रीय जीवनकी अेकता और अखंडताको कोअी नुकसान पहुंचाये बिना वे अंग्रेजीकी जगह लेकर विचारों तथा अभिव्यक्तिका अुपयुक्त साधन बन सकें।

आम तौर पर भारतमें प्रचलित १७० भाषायें और ५०० बोलियां गिनाअी जाती हैं, लेकिन अुनमें से १३ या १४ भाषायें ही साहित्य, शिक्षण या सार्वजनिक जीवनके लिअे हमारी प्रमुख या साहित्यिक भाषायें मानी जानी चाहिये। देशके आकार और आबादीका विचार करते हुअे तथा आम तौर पर अिन विभिन्न भाषाओंके बीच और खास तौर पर अुनके दो या तीन समूहोंके बीच जो गहरी समानताओंका संबंध है अुसे ध्यानमें रखते हुअे, जो बात हमारा ध्यान खींचती है वह अुनमें पाये जानेवाले समान तत्त्वों और दृढ़ संबंधोंकी बहुलता अुतनी नहीं है जितनी कि अुनकी व्यापकता है।

बेशक, ये संबंध और समानतायें अुन सांस्कृतिक परंपराओं, आदर्शों और मूल्यों — थोड़ेमें भारतीय जीवनपद्धति — की सुदृढ़ नींवका प्रतिबिम्ब मात्र हैं, जो भारतीय समाजके सांस्कृतिक समूहोंके बीच पाअी जानेवाली बाहरी विविधताओं और भेदोंके नीचे छिपी है। अितना तो निश्चित है कि भारतीय-आर्य और द्रविड़ दोनों भाषाओंके महापरिवारोंने संस्कृतसे बहुत बड़ी संख्यामें शब्द लिये हैं।

अिसके अलावा, सारे भारतके विशाल भूखंडमें सामाजिक और धार्मिक आन्दोलनोंके क्षेत्रोंमें निरंतर संबंध बना रहा है, राजनीतिक सत्ताकी सीमाओंमें बार बार परिवर्तन होते रहे हैं और अैसी ही दूसरी घटनायें होती रही हैं, जिनके फलस्वरूप अनेक शताब्दियोंके अितिहासकी कड़ी कसौटीसे गुजरकर भारतीय जीवन-पद्धतिने अेक निश्चित स्थायी स्वरूप ग्रहण किया है।

कोअी भाषा अपने बोलनेवाले समूहके अनुभव और संस्कृतिका स्थायी रेकर्ड और समकालीन अभिव्यक्तिकी द्योतक है। वह अेक करघा है जिस पर ये सांस्कृतिक वस्त्र बुने जाते हैं। मैं तो स्पष्ट रूपमें मानता हूं कि हम सबको, जो अुचित रूपसे हमारी समान सांस्कृतिक विरासतके लिअे गौरव अनुभव करते हैं, देशकी सारी महत्त्वपूर्ण भाषाओंकी रक्षा और विकास करना चाहिये — खास तौर पर संविधान द्वारा मान्य की हुअी प्रमुख भाषाओंका।

भारतीय परंपरा और जीवन-पद्धतिकी केन्द्रीय कल्पना विविध सांस्कृतिक अभिव्यक्तियोंमें समन्वय और अेकता स्थापित करनेकी है। अिसलिअे मेरा अनुरोध है कि हमें अपनी प्रत्येक भाषाके पास नम्रता और आदरकी भावनासे पहुंचना चाहिये, भले वह किसी कबाअिली समूहकी असंस्कृत और अलिखित भाषा ही क्यों न हो। अिसका कारण यह है कि अैसी प्रत्येक भाषा अुसे बोलनेवाले विशिष्ट सामाजिक समूहकी संस्कृतिको व्यक्त करनेवाला अनोखा साधन है। हमें भारतके विविध सांस्कृतिक जीवनमें प्रवेश करनेवाले अैसे प्रत्येक तत्त्वकी रक्षा और पोषण करना चाहिये।

www.vinoba.in

अिसके अलावा, चूंकि हमारी प्रत्येक प्रादेशिक भाषाको अेकसी समस्याओंका सामना करना पड़ेगा, अिसलिअे यह निश्चित है कि प्रत्येक भाषाकी वृद्धि और विकासमें सारी भाषाओंकी वृद्धि और विकाससे किसी हद तक मदद मिलेगी। अिसलिअे सही दृष्टिसे सोचा जाय तो संविधान द्वारा स्वीकृत भारतीय संघकी राजभाषा और दूसरी भाषाओंके बीच अथवा विभिन्न प्रादेशिक भाषाओंके बीच कोअी विरोध या दुश्मनी नहीं है। अुनमें से प्रत्येककी हमें सहायता करनी चाहिये, ताकि वह अपने बोलनेवाले समूहके लिअे विचारोंकी अभिव्यक्तिका अधिक अच्छा वाहन और भारतके अखंड सांस्कृतिक जीवनका सुन्दर तथा योग्य अंग बन सके।

(अंग्रेजीसे) (अपूर्ण)

अखिल भारतीय संस्कृत कोश

सम्पादक, 'हरिजन'

प्रिय महोदय,

हम बहुत समयसे सुनते आ रहे हैं कि पूनाकी डेक्कन कॉलेज पोस्ट-ग्रेज्युअेट रिसर्च अिन्स्टिटचूटने शास्त्रीय पद्धतिके अनुसार अेक बृहत् संस्कृत शब्द-कोश तैयार करनेका महत्त्वपूर्ण काम हाथमें लिया है जिसमें ज्ञानकी सारी शाखाओंका समावेश होगा। कुछ माह पूर्व मैं पूना गया था, तब अिस योजनामें काम करनेवाले अेक विद्वान्से मैंने सुना कि अिस कोशमें संस्कृत शब्दों और शब्द-समुदायोंके केवल अंग्रेजी अर्थ दिये जा रहे हैं। मैंने सुझाया कि अिस श्रेणीके कोशमें यदि हिन्दी अर्थ नहीं दिये गये तो वह हमारे लिअे जितना अुपयोगी होना चाहिये अुतना नहीं होगा। अिसलिअे हिन्दी अर्थ भी दिये जाने चाहिये। तो अुक्त सज्जनने कहा कि प्रस्तुत ग्रन्थ आन्तरराष्ट्रीय विद्याध्ययनकी दृष्टिसे तैयार किया जा रहा है अिसलिअे अिस बातकी जरूरत नहीं मानी गयी और बताया कि पर्याप्त पैसेके अभावमें अिस प्रवृत्तिको वर्तमान रूपमें चलाना कठिन मालूम हो रहा है।

अब जाननेमें आया है कि अिस कार्यको जल्दी पूरा करानेकी दृष्टिसे केन्द्रीय सरकारने संस्थाको काफी अच्छी मदद देनेकी सूचना की है। (अिसके पहले भी केन्द्रीय सरकार तथा कुछ प्रान्तीय सरकारें अिस कार्यमें रस ले रही थीं और आर्थिक मदद भी दे रही थीं।)

तो भारत सरकार संस्थाको अंग्रेजी अर्थोंके साथ-साथ हिन्दी अर्थ देनेकी सूचना क्यों न करे? मेरा खयाल है कि अुसे अैसी सूचना करना चाहिये। भारतमें विद्याध्ययनके हितकी और भारतीय अभ्यासियोंके हितकी दृष्टिसे हिन्दीका दावा कहीं ज्यादा बड़ा है। क्या सरकार अिस विषयमें आवश्यक कदम अुठायेगी?

अहमदाबाद — १४ पां० ग० देशपाण्डे
६-१०-'५५

[मैं अूपर दी गयी सूचनाका समर्थन करता हूं। आज जब हम स्वराज्यका अुपभोग कर रहे हैं और हिन्दीको देशकी आंतर-भाषा घोषित किया गया है अुस समय तैयार हो रहे शब्द-कोशमें अखिल भारतीय भाषा हिन्दीके पर्यायवाची शब्दोंका न दिया जाना अकल्पनीय मालूम होता है। यदि हिन्दी अर्थ नहीं दिये गये तो वह राष्ट्रीय कार्य नहीं होगा, जो कि अुसे होना चाहिये यदि अुसे सचमुच आन्तरराष्ट्रीय और आत्मसम्मान-युक्त बनना हो। अुसमें अंग्रेजी शब्द भले रहें लेकिन यह चीज अुसे आन्तरराष्ट्रीय बना देगी, अैसा समझना हमारे सामने आ रही युद्धोत्तरकालीन आन्तरराष्ट्रीय दुनियाको देखते हुअे भोलापन ही कहा जायगा। लेकिन मेरा यह मतलब नहीं कि अंग्रेजी शब्द अुसमें नहीं होना चाहिये। यह स्पष्ट है कि प्रस्तुत शब्द-कोश संस्कृत-हिन्दी-अंग्रेजी शब्द-कोश ही होना चाहिये।

७-१०-'५५ —म० प्र०]
(अंग्रेजीसे)

www.vinoba.in

शिक्षामें मेकालेकी परंपरा

ता० १७ सितम्बरके 'हरिजनसेवक'में मेरा 'हिन्दी बनाम प्रादेशिक भाषाअें' शीर्षक अेक लेख प्रकाशित हुआ था। यह लेख असलमें बम्बअीके दैनिक पत्रोंमें प्रकाशनके लिअे भेजा गया अेक पत्र था। अब तो बम्बअी विश्वविद्यालयकी सीनेट माध्यम कमेटीके अधिकांश सदस्यों द्वारा समर्थित अिस रिपोर्टको स्वीकार कर चुकी है कि बम्बअी शहरमें शिक्षाका माध्यम हिन्दी ही हो। चूंकि यह परिवर्तन १० या १५ वर्षके बाद होगा अिसलिअे मैंने अुक्त लेखमें जो प्रश्न अुठाया था, अुसे हल करनेका काम तो बम्बअी विश्वविद्यालयके लिअे तब भी रह जाता है। शिक्षकों और विद्यार्थियोंको अिस बात पर विचार करना चाहिये और अुसका ठीक हल निकालना चाहिये कि अुन्हें तत्काल क्या करना है; कारण, अंग्रेजी तो माध्यमकी तरह अव्यावहारिक और अव्यवहार्य है।

अेक भाअीने बम्बअीके अेक अखबारमें मेरे अिस लेखकी आलोचना की। मैंने अिस आलोचनाका जाहिर अुत्तर भेजा जो नीचे अुद्धृत किया जाता है:

"श्री बाल देशपाण्डेने बम्बअी विश्वविद्यालयमें शिक्षाके माध्यमसे संबंधित मेरे अुस पत्रकी आलोचना की है जिसे आपने अपने ६ सितम्बरके अंकमें छापा था। अुसे पढ़कर मैंने महसूस किया कि मुझे अपनी स्थिति दुबारा स्पष्ट करनी चाहिये, ताकि वैसी गलतफहमी जैसी कि श्री देशपाण्डेके पत्रमें दिखाअी देती है दूर हो जावे।

'मेकालेकी परम्परा' का अुल्लेख मैंने प्रसंगवश ही किया था और अुसमें मेरा अभिप्राय मेकालेकी अुस नीतिसे था जिसे लार्ड मेकालेने हमारे देशमें अुच्च शिक्षाके लिअे शुरू किया और जिसका बम्बअी विश्वविद्यालयके कुछ लोग अज्ञानवश आज आजाद भारतमें भी अनुगमन करते मालूम होते हैं। मेकालेकी नीति यह थी कि ब्रिटिश सरकारने जिस भाषाको अपने शासनका माध्यम बनाया था अुसीका अुपयोग शिक्षाके माध्यमकी तरह किया जाय। शासन और शिक्षाका माध्यम अेक ही हो और वह हो विद्यार्थियोंकी दृष्टिसे अेक अनजानी अपरिचित भाषा — जिस चीजको मैंने मेकालेकी परंपरा कहा है अुसकी यही विशेषता है। श्री देशपाण्डे स्वीकार करते हैं कि अिस तरह नौकरशाहीकी पद्धतिसे चलनेवाले शासनके लिअे 'बाबू लोगों' का लगातार मिलते रहना पक्का हो जाता है। जाहिर है कि हिन्दीके द्वारा हम अैसी परिस्थितिका निर्माण नहीं करना चाहते, भले वह मात्रा या विस्तारकी दृष्टिसे कितनी ही भिन्न क्यों न हो।

जैसा कि हम जानते हैं, ब्रिटिश शासकोंने यह निर्णय किया कि भारतमें शासनका माध्यम अंग्रेजी रहे। मेकालेने यहांके शिक्षित वर्गमें ब्रिटिश संस्कृति और सभ्यताके आदर्शोंको फैलाने और अुनकी जड़ें जमानेके लिअे शिक्षाके अंग्रेजी माध्यमका साधन तैयार कर दिया। नौकरियोंके मोहने अिस विदेशी माध्यमके अुपयोगको वेग दिया। अिसका दुःखदायी परिणाम यह हुआ कि शिक्षण विदेशी भाषाके माध्यमसे हुआ जिससे सच्चा विद्याध्ययन नहीं हो सका। अिसके सिवा हमारी अपनी भाषाओंकी प्रगति और विकास रुका और जनता वर्गोंमें बंट गयी, सो अलग।

बम्बअी विश्वविद्यालयने भी, मुझे डर है, शिक्षाके माध्यमकी तरह विद्यार्थियोंकी भाषासे भिन्न अेक दूसरी भाषा — यानी हिन्दी — लादनेकी अुसी युक्तिका आश्रय लिया है। यहां कमेटीकी अिस सिफारिशका अुल्लेख कर देना ठीक होगा कि सरकारी नौकरियोंमें भरतीके लिअे होनेवाली परीक्षाओंकी भाषा केवल हिन्दी हो। अब यह तो हमें समझना चाहिये कि यह कोअी शैक्षणिक सवाल नहीं है। जाहिर है कि यह सिफारिश करनेमें कमेटी

अपनी मर्यादाके बाहर गयी; साथ ही अुससे यह भी प्रगट होता है कि हिन्दी ही अेकमात्र माध्यम हो, यह सूचना करते हुअे कमेटीका मन किस दिशामें काम कर रहा था। मैंने अिसी चीजको 'मेकालेकी परंपरा' के अनुरूप बताया था।

श्री देशपाण्डे अैसा सूचित करते मालूम होते हैं कि हिन्दी माध्यम जारी करना हमारे संविधानका निर्देशक सिद्धान्त है! जैसा कि हम बखूबी जानते हैं यह बात सत्यसे दूर है। संविधान शिक्षाके माध्यमके बारेमें कुछ नहीं कहता। वह तो भारतीय संघको अपने सरकारी कामके लिअे जिस सर्वसामान्य भाषाकी जरूरत होगी अुसका विचार करता है। और अैसा करते हुअे अुसने अिस बातको स्पष्ट करनेकी खास सावधानी रखी है कि परिशिष्ट ८ में गिनायी गयी हमारी सारी राष्ट्रभाषाओंका पूरा सम्मान होना चाहिये। अिन समस्त भाषाओंकी भावी प्रगति और विकासके बारेमें वह अुनकी शुभकामना करता है। अुसका मन्तव्य अितना ही है कि हिन्दी आन्तरप्रान्तीय तथा अखिल भारतीय शासनका माध्यम बने। संविधान यह नहीं चाहता कि हिन्दी जिनको 'प्रादेशिक' भाषायें कहा जाता है अुनके प्रदेशोंमें अुनका अपना विहित और न्याय्य स्थान छीन ले। प्रदेशोंमें शिक्षा और शासनके क्षेत्रोंमें न्यायतः माध्यम बननेका अधिकार प्रादेशिक भाषाओंका ही है।

श्री देशपाण्डे कहते हैं कि हमारे विद्यार्थी हिन्दीको अुसी तरह आसानीसे सीख सकते हैं जिस तरह वे फ्रेंच और जर्मन सीखते हैं, जिन्हें वे रसायनशास्त्र आदि विषयोंका अध्ययन करनेके लिअे पढ़ते हैं। यह अुदाहरण बहुत ही कम कहें तो भ्रामक है। फ्रेंच और जर्मनकी तरह हिन्दी केवल किसी विषयकी कुछ पुस्तकोंके अध्ययनकी भाषा नहीं होगी। श्री देशपाण्डेको शिक्षाके माध्यमकी तरह हिन्दीका औचित्य सिद्ध करना है। फ्रेंच और जर्मन शिक्षाका माध्यम नहीं हैं।

अन्तमें मुझे यह और कहना चाहिये कि श्री देशपाण्डेने मेरे ६ सितम्बरवाले पत्रका मुख्य मुद्दा छोड़ दिया है। मैंने यह प्रश्न अुठाया था कि चूंकि हमारे विद्यार्थी अितनी अंग्रेजी नहीं जानते कि वे अुसका माध्यमकी तरह अुपयोग कर सकें अिसलिअे माध्यमको तुरन्त बदलनेकी आवश्यकता है। कमेटीने यह निर्णय किया था कि हिन्दी १० या १५ सालके बाद आ सकती है। मैंने पूछा था कि कठिनाअीको हल करनेके लिअे तुरंत क्या किया जाय और सुझाया था कि अिस प्रश्नका स्पष्ट हल यह है कि प्रादेशिक भाषाओंको माध्यमके तौर पर अपनाया जाय। प्रादेशिक भाषाअें अिस कामके लिअे हमें अेकदम अुपलब्ध हैं और अुन्हें अपनाकर हम अभीष्ट परिवर्तन तुरन्त शुरू कर सकते हैं। बालकोंको अुनकी भाषासे भिन्न किसी दूसरी भाषाके जरिये पढ़ाना सही शिक्षा-नीतिके सारे सिद्धान्तोंके खिलाफ होगा। तो माध्यम प्रादेशिक भाषा होना चाहिये और साथ ही हिंदीका अध्ययन सारे विद्यार्थियोंको अनिवार्य विषयके रूपमें करना चाहिये। मैं आशा करता हूं कि श्री देशपाण्डे हिन्दी सीखना शुरू करने और अुसे अहिन्दी-भाषी विद्यार्थियोंके लिअे माध्यमके तौर पर अुपयोग करनेका फर्क महसूस करेंगे। हिन्दीका अैसा अुपयोग अनावश्यक और व्यर्थ ही नहीं, अवैज्ञानिक भी है।

सारी दुनियामें शिक्षाके माध्यमका सिद्धान्त यह है कि बालककी अपनी भाषा ही अुसकी शिक्षाका माध्यम होना चाहिये। मैं आशा करता हूं कि आजाद भारत विदेशी शासकों द्वारा चलायी गयी गलत परंपराओंका अनुकरण नहीं करेगा, बल्कि जो सिद्धान्त सारी दुनियामें चल रहा है और मान्य हुआ है, अुसीको अपनायेगा।"

६-१०-'५५ **मगनभाई देसाई**
(अंग्रेजीसे)

अमानवीय क्रूरता

कुछ ही दिन पहले हमारे पढ़नेमें आया था कि अुत्तर प्रदेशके अेक गांवमें अेक भीड़ने दो व्यक्तियोंकी हत्या कर दी। दुर्भाग्यके अिन शिकारोंमें अेक तो वहांकी विधान-सभाके सदस्य थे जिनके प्राण अपने साथीको — जो भीड़के क्रोधका असली लक्ष्य था — बचानेकी वीरतापूर्ण कोशिशमें गये। कारण संभवतः राजनीतिक पागलपन रहा हो या निर्दय वैरभाव रहा हो।

तंजोर जिलेके अेक पत्रलेखकने पागलपन और क्रोधकी अैसी ही अमानवीय अेक दूसरी घटना लिख भेजी है, जो अिस प्रकार है:

"१३ अक्तूबरको करीब ११ बजे दिनको मैं अपने खेतमें धानके रोपे लगाये जानेके कामका निरीक्षण कर रहा था। पासके ही अेक खेतमें कुछ हरिजन भाअी काम कर रहे थे। अेकाअेक मैंने अेक हरिजनको चिल्लाते हुअे सुना। मुड़कर देखा तो अेक हरिजनको बांसकी लकड़ीसे पीटा जा रहा था। मार खाते-खाते वह खेतमें गिर पड़ा, लेकिन अुसके मालिकने मारना बंद नहीं किया। कोअी पाव घंटेके बाद वह अुठा और अपनी जान बचानेके लिअे यह कहता हुआ भागा कि 'मुझे जाने दो, मैं कहीं दूसरी जगह काम करूंगा।' लेकिन मालिकने अुसे जानेसे रोका। वह अुसके पीछे लाठी लेकर भागता गया और करीब अेक फर्लांग तक अुस पर मिट्टी और ओंटोंके ढेले चलाता गया। आखिरमें अुस हरिजनने (पनायी) नदीमें कूद कर अपनी जान बचायी। खेतमें काम कर रहे दूसरे हरिजनोंने मालिकको न मारनेके लिअे समझाया, पर वह तो यही धमकी देता रहा कि मैं तो अुसे और अुसके परिवार तथा बच्चोंको — जो गांवमें ही रहते हैं — कुचल डालूंगा। यह मालिक भी अुसी गांवमें रहता है। बादमें अुस बेचारे हरिजन और अुसकी स्त्री तथा बच्चोंका क्या हुआ, सो भगवान् ही जानें। अेक ही दिन पहले अिसी मालिकने अुस आदमीसे अपने खेतमें सुबहसे शामके पांच बजे तक काम कराया था और बीचमें खानेको कुछ भी नहीं दिया था। 'लिंचिंग' की बात अभी तक मैंने किताबोंमें पढ़ी थी, अब अुसे आंखोंसे देख लिया।"

अिस अमानवीय क्रूरताकी निंदा किन शब्दोंमें की जाय? मैं आशा करता हूं कि सरकारको अिस काण्डकी खबर लग गयी होगी और वह अुसके बारेमें अुचित कार्रवाअी करेगी।

२०-१०-'५५ **म० प्र०**
(अंग्रेजीसे)

बुनियादी शिक्षा
गांधीजी
कीमत १-८-० डाकखर्च ०-६-०

शिक्षाकी समस्या
गांधीजी
कीमत ३-०-० डाकखर्च १-२-०
नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद-१४

विषय-सूची

		पृष्ठ
गांधीजी और संरक्षकताका सिद्धान्त	सुरेश रामभाअी	२७३
अुड़ीसामें विनोबा — १२	नि० दे०	२७४
हमारी राष्ट्रीय कसौटी	मगनभाई देसाई	२७६
भारतकी भाषायें और बोलियां	बी० जी० खेर	२७८
शिक्षामें मेकालेकी परम्परा	मगनभाई देसाई	२७९
टिप्पणियां :		
अखिल भारतीय संस्कृत कोश	पां० ग० देशपांडे	२७९
अमानवीय क्रूरता	म० प्र०	२८०

www.vinoba.in